ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 PP. NO.- 86-88

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- III, Issues-25, YEAR- July-Sept.-2022

योग का प्रवेश द्वार : यम-नियम

प्रो0 (डॉ0) गोविन्द कुमार टी. वेकरिया

(M.A., M.Phil., Ph.D., LL.B., B.J.M.C.), म्युनि0 महिला कॉलेज, गोन्डल– राजकोट (गुजरात) भारत

Received-08.07.2022, Revised-15.07.2022, Accepted-20.07.2022 E-mail:profgtvekariya@gmail.com

सारांशः– ***'योग' भारतीय अतिप्राचीन विज्ञान और कला है। 'योग' भारतीय संस्कृति, सभ्यता, साधना एवं साहित्य का गौरवमय अविवादात्मक विषय है। पश्चिमी सभ्यता, भौतिकवादी, मतलबी संस्कृति के सम्होन में आकर आज के मानव ने अपनी गरिमा, गौरव, नैतिक मूल्यों, आदर्शों की निरंतर अवहेलना कर रहा हैं। अपने चरित्र–खंडित कर दिया है। एक तरह से खत्म कर दिया है। परिणाम देश–समाज, व्यक्ति का पतन हो रहा है। इस पतन का एक मात्र इलाज 'योग' है। महर्षि पतंजलि एवं गुरु गोरखनाथ 'योग साधना' के अति महत्त्वपूर्ण आधार स्तम्भ है। इन्होंने योग–साधना के अंग बताये है, इसमें 'यम और नियम' 'योग' का महत्त्वपूर्ण अंग है। इस अंगों की साधना से ही योग का प्रारंभ होता है। योग भारतीय ज्ञान एवं संस्कृति का मुख्य स्तम्भ है। 'यम–नियम' से चरित्र का निर्माण होता है।***

कुंजीभूत शब्द– सृष्टि, साधना, संस्कृति, परंपरा, योग, अंग, सुख, लक्ष्य, प्राणवायु, भारतीय संस्कृति, सभ्यता, यम–नियम।

'भारत' एक शाश्वत अमृत–पथ है, उसके कण–कण में अध्यात्म बसता है। इनकी हर श्वास में सत्य धड़कता है। यह देश एक सनातन यात्रा है। विश्व का भाग्या विधाता है। भारत विश्व गुरु है, क्योंकि इनके पास 'योग' विधा है। इनमें जीवन को रूपांतरण करने की सारी कुंछिया छिपी है। आज हमारा 'योगशास्त्र' इक्कीसवीं सदी की देहलीज पर आकर खडा है। जो विश्व मानव अपनी खोई हुई गरिमा एवं गौरव वापस दे सकता है। योग के सूत्र विश्व मानव के जीवन को मधुशाला बना दे सकते है।

योग का उद्‌भव स्थान भारत है। यह भारतीय मनीषियों की आध्यात्मिक चेतना की सुन्दरतम गरिमामय एवं गौरवमयी अभिव्यक्तियों में एक अद्वितीय एवं अनूठी अभिव्यक्ति है। 'योग' शारीरिक, मानसिक, वाणीक, नैतिक एवं आध्यात्मिक अनुशासन की एक अद्वितीय पद्धति है। जिस के द्वारा देह, मन, वाणी और प्राण पर पूर्ण नियंत्रण प्रस्थापित कर सकते है।

'योग' भारतीय संस्कृति, साधना एवं साहित्या का अविवादात्मक विषय है। योग भारत का प्राचीनतम आध्यात्मिक विज्ञान है। पश्चिमी सभ्यता एवं भौतिकवादी संस्कृति के सम्मोहन के वश में आकर आज का मानव–समाज नैतिक मूल्यों की निरंतर अवहेलना कर रहा हैं, परिणाम स्वरूप आज विश्व समाज का पतन हो रहा है। इसी समस्या का हल एक मात्र 'योग' है।

गुरु गोरक्षनाथ एवं महर्षि पतंजलि 'योगविद्या' के महत्त्वपूर्ण आधार स्तम्भ है। गोरक्षनाथ के योग एवं पतंजलि के योग में एक अंतर यह है कि गोरक्ष ने 'योग साधना' की संख्या छः बताई है एवं पतंजलि योग साधना के आठ अंग माने है। यह दो अंगों को लेकर इन दोनों के बीच भेद का कारण चर्चा का विषय बन गया है। यम और नियम गोरक्ष ने महत्त्व नहीं दिया है। गोरक्ष का योग क्रिया प्रधान है एवं पतंजलि का योग ज्ञान प्रधान है। नाथ योगी एवं गोरक्षनाथ अपने शिष्यों को दीक्षा तब देते है, जब गुरु को लगे कि शिष्य यम–नियम का पालन कर रहा है। यम–नियम दीक्षा के पहले की तैयारी है। इन्हीं कारण 'हठयोग' में यम–नियम को पतंजली की तरह महत्त्व दिया गया नहीं है। डॉ0 कमलसिंह के अनुसार– नाथ पंथ की साधना पद्धति का नाम 'हठयोग' है

यद्यपि पतंजलि ने राजयोग को हठयोग से भिन्न बताया है फिर भी बिना हठयोग वास्तव में प्राणवायु के निरोध पर आधारित है और राजयोग मन के निरोध पर, किन्तु मन को निरोधने के लिए प्राणवायु का निरोधना आवश्यक है। नाथ पंथ में हठयोग को राजयोग से अलग करके नहीं देखा गया। हठयोग वास्तव में गँरी योग और लय योग में भी सहायक है। दूसरे हठयोग के ग्रंथों में अष्टांग योग और षड़ंगयोग दोनों ही विधियाँ आती है।1

एक तरह से देखा जाय तो कह सकते है कि 'हठयोग' की षडंग साधना यम और नियम को संपुष्ट करने के लिए की जाती है। यम और नियम ही सम्पूर्ण साधना है।

यम– "यम उपरमै" दृ यम शब्द का अर्थ है– निवृत्त होना। 'योग सुधाकर' में कहा है– "यामयन्ति निवर्तयन्ति इति यमाः। अर्थात् यम की साधना निवृत्तिमूलक है। यम का शाब्दिक अर्थ है– नियंत्रित करना, दमन करना, संयत करना, प्रतिबन्ध करना, अवरोध करना, रोकना आदि। यम का पालन करकर मनुष्य नैतिक मूल्यों प्राप्त करता है। वह इन्द्रियों पर विजय प्राप्त कर विचार शुद्ध करता है। अहंकार को त्याग देता है। यम चित को वश में करने के लिए साधन है। शरीर और इन्द्रियों के प्रति विराग की भावना यम है। व्यवहार शुद्धि ही यम है।

महर्षि पतंजलि के पाँच यम– महर्षि पतंजलि कहते हैं– "अहिंसासत्यास्तेय ब्रह्मचर्यापरिग्रह यमः।।" अर्थात् अहिंसा सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह ये पाँच यम हैं –

अनुरूपी लेखक/संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- III, Issues-25, YEAR- July-Sept.-2022

1. अहिंसा : मन, वाणी और शरीर द्वारा किसी को पीड़ा पहुँचना हिंसा है। अहिंसा का स्वरूप अति सूक्ष्म है। इसको ठीक तरह से समझकर पालन करना चाहिए। हमको यह देखना होगा कि कार्यों के पीछे भावना क्या है? यदि डॉक्टर रोगी का कष्ट करने के लिए आपरेशन करता है, गुरु शिष्य के कल्याण के लिए ताड़ता है, माता–पिता बच्चे की घुराई छुड़ाने के लिए ताड़ते हैं। यह अप्रत्यक्ष रूप में अहिंसा होती है। यदि राग–द्वेष, स्वार्थ बदले लेने आदि भावनाओं लिए जाते है, वह हिंसा है। अहिंसा सब यभांगो का मूल है। अहिंसा पालन से साधक का ह्रदय कोमल हो जाता है। स्वार्थ और अहंकार कम होता है।
2. सत्य : प्रत्यक्ष, अनुमान एवं प्रमाण द्वारा वस्तु के यथार्थ रूप को मन में धारण कर, वाणी से कथन करना एवं उसी तरह व्यवहार करना सत्य कहा जाता है। वह सत्य तभी माना जाता है, वह प्राणीयात्रा के लिए उपकारी हो। यदि सत्य बोलने से हिंसा होती है, तब यह न बोलना चाहिए। सत्य प्राणियों के कल्याण के लिए होना चाहिए। सत्यमय हो जाने से योगी में शक्ति आ जाती है। वह जिसको जो वरदान, शाप था, आशीर्वाद देता है, वह सत्य हो जाता है – "सत्य प्रतिष्ठायां किर्याफ लाशयत्वम्।।"
3. अस्तेय : महर्षि कहते हैं कि जब साधक में चोरी का अभाव पूर्णतया प्रतिष्ठित हो जाता है, तब पृथ्वी में जहाँ कहीं भी गुप्त स्थान में पड़े हुए समस्त रत्न उसके सामने प्रकट हो जाते हैं, "अस्तेय प्रतिष्ठायां सर्वरत्नोपस्थानम् ।।" महर्षि व्यास के अनुसार धर्म के विरुद्ध, अन्यायपूर्वक किसी दूसरे व्यक्ति के द्रव्य इत्यादि को ग्रहण करना स्तेय है।
4. ब्रह्मचर्य : योगसूत्र व्यास भाष्य में कहा है– उपस्थेन्द्रिय का संयम ब्रह्मचर्य कहलाता है। समस्त इन्द्रियों निग्रह पूर्वक संयम करना चाहिए। साधक के लिए यह आवश्यक है। ब्रह्मचर्य की दृढ़ स्थिति हो जाने पर, सामर्थ्य का लाभ होता है– "ब्रह्मचर्य प्रतिष्ठायां वीर्यलाभः।।" मन कर्म वचन से काम विषयक आचरण से दूर रहना ब्रह्मचर्य कहलाता है। ब्रह्मचर्य का अर्थ है– ऐसा आचरण जो ब्रह्म प्राप्ति के लिए आवश्यक हो।
5. अपरिग्रह : धन–संपत्ति आदि भोग की सामग्री को आवश्यकता से अधिक सग्रह न करने को अपरिग्रह कहते हैं। भोग साधनों को ग्रहण न करने की भावना को अपरिग्रह कहते हैं। अधिक संग्रह की वृत्ति मन में अशांति पैदा होती है। क्लेश का कारण हो जाता है। पतंजलि कहते हैं– "अपरिग्रहस्थैर्ये जन्मकथन्ता संबोधः।" अर्थात् अपरिग्रह की स्थिति हो जाने पर पूर्वजन्य कैसे हुए थे? इस बात का ज्ञान हो जाता है। साधक को वह अपनी आवश्यकता कम रखे, अधिक संग्रह न करें।

इस प्रकार यम का अभ्यास मुख्य रूप से मानसिक एवं गौण रूप से शारीरिक स्तर का है। यह पाँच यम जन्म देशकाल और समय की सीमा से अबाधित होकर अभ्यास किए जाते से इसे महाव्रत कहा है। स्वस्थ अमाज के लिए यह पाँच व्रत आवश्यक है। यदि निष्काम भाव से यमों का पालन करें तो केवल्य की प्राप्ति में सहायक होता है।

पतंजलि के पांच नियम :

महर्षि पतंजलि ने योगसूत्र में नियमों कि संख्या पांच बतायी है– "शौचसंतोषतपः स्वध्ययेश्वर प्रनिधानानि नियमोः ।" अर्थात् शोच, संतोष, तप, स्वाध्याय और इश्वर–शरणागति ये पाँच नियम है। यह अष्टांगयोग का दूसरा अंग है। नियम का अभिप्राय कुछ नियमित अनुष्ठानों के द्वारा मन को अनुशासन में लाना। इससे सात्त्विकता एवं पवित्रता प्राप्त होती है, एकाग्रता के लिए तैयारी करना है। इनकी नींव पर योग का अनुष्ठान सुरक्षित एवं संपन्न किया जा सकता है। नियम का शाब्दिक अर्थ है– रोक लगाना, वशीकरण करना, सीमित करना, अवरोध करना, व्रत, प्रतिज्ञा, आत्मनिग्रह, धार्मिक अनुष्ठान आदि। मनु ने यमों के साथ नियमों का एवं नियमों के साथ यमों का पालन अनिवार्य बताया है– "यमन् सेवेत् सततं न नित्यं नियमान्बुधः। यमान् पतत्यकुर्वाणो नियमान्केवलान्भाजन्।"

1. **शोच**– शौचे का सीधा अर्थ है– शुद्धि अर्थात् पवित्रता। अपने को हर तरह से शुद्ध पवित्र रखना शौच के अंतर्गत आता है। पतंजलि कहते हैं– "शोचात्स्वाङजुगुप्सा परैरसंसर्गः ।" अर्थात् शौच के पालन से अपने अंगों में वैराग्य और दूसरों से संसर्ग न करने की इच्छा होती है। जप, तप आदि अन्य साधना द्वारा आतंरिक शौच के लिए अभ्यास से राग–द्वेष, ईर्ष्या आदि यमों का अभाव होने से मनुष्य का अन्तःकरण निर्मूल और स्वच्छ हो जाता है। मन की व्याकुलता निर्मल होती है और प्रसन्न बनी रहती है। एकाग्रता आती है, इन्द्रिय वश होती है और आत्मदर्शन के योग्यता आ जाती है। बाह्यशौच शरीर को स्नानादि से पवित्र रखना। वस्त्रो स्वच्छ रखना। सात्त्विक आहार करना। शरीर के आंतरिक भाग की सफाई करना। बाह्य शौच है। इस तरह बाह्य शौच और आभ्यत्तर शौच दो प्रकार के शौच है।
2. **संतोष**– भौतिक पदार्थों में तृष्णा का क्षीण हो जाना संतोष कहलाता है। संतोष, सुखों का मूल है। व्यास भाष्य में व्यास ने कहा है– "तृष्णाक्षय सुखस्यैते।" अर्थात् तृष्णाक्षय से ही सच्चा सुख प्राप्त होता है। गीता ने कहा है– तृष्णारहित हो जाना संतोष है अर्थात् निष्काम कर्म। बिना संतुष्टि से शांति नहीं मिलती है। संतोषरहित चित्त से ज्ञान उसी तरह प्रकाशित नहीं होता जैसे मलिन दर्पण से।

पतंजलिकृत योगसूत्र में लिखा है– "संतोशादानुत्तमसुखलागः ।।42।।" अर्थात् संतोष से, जिससे उत्तम दूसरा सुख

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-15, No.- III, Issues-25, YEAR- July-Sept.-2022

कोई नहीं है– ऐसे सर्वोत्तम सुख का लाभ होता है। चाह रहित होने पर जो अनंत सुख मिलता है, उससे कोई बराबरी नहीं कर सकता ऐसा दूसरा इस संसार में कोई नहीं है। परमसंतोष सर्वोत्तम सुख है। वशिष्ट संहिता वशिष्ठ के अनुसार– "यदृच्छालाभसंतुष्टं मनःपुंसा भवेदिति। या धीरतामृषयः प्राहुः संतोष सुखलक्षनम" अर्थात् स्वतः प्राप्ति में जिस मनुष्य का मन संतुष्ट रहे ऐसी बुद्धि को सुखकारक संतोष कहा जाता है। हानि होने से दुःख नहीं एवं लाभ होने से आनंद नहीं, जो हो रहा है, अच्छा हो रहा है ऐसा समत्व होना और फल की इच्छा नहीं रखना चाहिए, ऐसी चिंता करनी ही नहीं चाहिए। प्राप्त स्थिति में ही संतुष्ट रहना चाहिए। संतोष का अभ्यास से यथार्थ में जीता है। संतोष के बीना अन्य साधना निष्फल हो जाती। चित्त में स्थिरता ही सफलता मिलती है– योग साधना के लक्ष्य में।

3. तप : महर्षि पतंजलि ने तप को लेकर कहाँ है – "कार्यन्द्रियसिद्धिरशुद्धिक्षया–त्तपसः।।43।।" अर्थात् तप के प्रभाव से जब अशुद्धि का नाश हो जाता है, तब, शरीर और इन्द्रियों की सिद्धी हो जाती है। 'हठयोग' तप को विशेष महत्त्व देते है। तप के द्वारा इन्द्रियों को वश में किया जाता है। योग साधकोतपस्वी होना जरुरी है बिना तप से योग सिद्ध नही होता है। तप का अर्थ है– तपना, शुद्धिकरण। तप से अशुद्धि का नाश होने से शरीर एवं इन्द्रियों की सिद्धि होती है।
4. स्वाध्याय : अपने आंतरिक अध्ययन को स्वाध्याय कहा गया है। इसमें साधक अंतर्मुख होकर अपने चित्त एवं उसमें निहित विचारों का अध्ययन करता है। स्व–आत्मा, आत्म सम्बन्धीज्ञान, चिंतन, मनन करना स्वाध्याय है। स्वाध्याय से इष्ट देवता का साक्षात्कार होता है– "स्वाध्यायदिष्टदेवता संप्रयोगः ।।44।।"[4] शास्त्राभ्यास मंत्रजय और अपने जीवन का अध्ययन रूप स्वाध्याय के प्रभाव से योगसाधक अपने इष्टदेवता का दर्शन हो जाता है। स्वाध्याय का शाब्दिक अर्थ है– स्वयं का अध्ययन करना। अपने बारे में जानना और दोषों को देखना भी स्वाध्याय है। स्वाध्याय के बल से अपने जीवन को सत्य शिवम् सुन्दरम् बना सकते है। इनको बल से जीवन को बदलो जा सकता है। शुद्ध, पवित्र और सुखी जीवन के लिए सत्संग और स्वाध्याय अत्यंत जरुरी है।
5. ईश्वर प्रणिधान : ईश्वर के प्रति प्रेम पूर्ण श्रद्धा आत्मसमर्पण, ईश्वर का भजन, ध्यान आदि ईश्वर प्रणिधान है। शरीर, इन्द्रिय, मन, प्राण, अन्तःकरण आदि समस्त क्रिया से किये जाने वाले सम्पूर्ण कर्मों एवं उनके फलों ईश्वर को अर्पित कर देना ईश्वर प्रणिधान कहलाता है– "ईश्वर प्रणिधानंसर्वक्रियाणों परमगुरावर्पणम् तत्फल सन्यासों वा।" (व्यासभाष्य योग सूत्र) महर्षि पतंजलि कहते है– "समाधिसिद्धिरीश्वरप्रनिधाणात् ।।45।।" अर्थात् ईश्वर की शरणागति से योगसाधना में आनेवाले विघ्नों का नाश होकर शीघ्र ही समाधि निष्पन्न हो जाती है। राजयोग, हठयोग, जालालदर्शानोपनिषद, वष्टिसंहिता, शाण्डिल्योपनिषद एवं चरवादास ने ईश्वर पूजन के नाम से इस प्रणिधान का वर्णन है।

योग – साधना के क्षेत्र में 'हठयोग' साधना नाथ परम्परा की एक अनुपम एवं मौलिक सिद्धि है। आदिनाथ (भगवान् शिव) ने तत्त्व–जिज्ञासु माता पार्वती को योग–विषयक सौ प्रथम गुप्त–ज्ञान दिया था। इससे परम्परा चलती है। हठयोग एक प्राण–साधना है। हठयोग–साधना में शरीर–शुद्धि का विशेष महत्त्व है। हठयोग प्रदीपिका में यम दस बताये है दृ 1) अहिंसा 2) सत्य 3) अस्तेय 4) ब्रह्मचर्य 5) क्षमा 6) धृति 7) दया 8) आर्जव (कामलता) 9) मिताहार। शौच हठयोग प्रदीपिका में नियम दस बताये है 1) तप, 2) संतोष, 3) आस्तिकता, 4) दान, 5) ईश्वर पूजन, 6) श्रवण, 7) लज्जा, 8) मति, 9) जप, 10) होम ।[5]

इस यम–नियम से योग–साधक अपनाकर साधक अध्यात्म की उच्चावस्था शीघ्र ही प्राप्त कर लेता है। यह महत्त्वपूर्ण अंग है– इनके बिना साधना असंभव है। स्वामी विवेकानंद ने कहा था दृ यम और नियम चरित्र निर्माण के साधन है । इनको नींव बनाए बिना किसी तरह ही योग–साधना सिद्ध न होगी। यम और नियम के दृढ़ प्रतिष्ठित हो जाने पर साधक अपनी साधना के फल का अनुभव कला आरम्भ कर देते है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. गोरक्षनाथ और उनका हिंदी साहित्य : डॉ. काल सिंह, कुसुम प्रकाशन, तृतीय संस्करण, सन् 2010, पृ. 40.
2. योग–दर्शन महर्षि पतंजलि, गीताप्रेस, गोरखपुर, सं. 2074, पृ. 70, साधना पाद–2, सूत्र–42.
3. योग–दर्शन महर्षि पतंजलि, गीताप्रेस, गोरखपुर, सं. 2074, पृ. 70, साधना पाद–2, सूत्र–4.
4. अहिंसा सत्मस्तेयं ब्रह्मचर्यक्षमा धृतिः ।
   दयार्जव मिताहारः शौचं चौव यम देश ।।17।।
   तपः संतोष आस्तिक्यं दानमीश्वर्पूजन ।
   सिद्धांतवाक्यश्रवणं हिमती च तपोहुतम् ।
   नियमों दश सम्प्रोक्ता योगशास्त्रविशारयैः ।।18।। – हठयोग प्रदीपिका, सं. रामलाल श्रीवास्तव, तृतीय संस्करण वि. .सं. 2058, गोरखनाथ मंदिर–गोरखपुर, पृ. 6, सूत्र–17–18.
5. पतंजलि योग एवं नाथ योग : डॉ. सुरक्षित गोस्वामी, सत्यम पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली.

*****